बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 109

जरूरत से ज्यादा कड़ाई

वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण की अध्यक्षता में आयोजित वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) परिषद की पहली बैठक में सलाह मशविरे के आधार पर चर्चा करने की पहले से चली आ रही स्वस्थ परंपरा को जारी रखा गया। शुक्रवार को आयोजित इस बैठक में परिषद ने दरों के पुनर्गठन पर कोई निर्णय नहीं लिया और कर वंचना के मामलों पर निगरानी के मानकों को कड़ा करने पर ध्यान केंद्रित किया। इलेक्ट्रिक व्हीकल और चार्जरों पर कर दरों में कमी के प्रस्तावों को निर्धारण समिति को सौंप दिया गया और लॉटरी पर एकसमान जीएसटी दर के विवादित मुद्दे को महान्यायवादी के पास भेज दिया गया।

परिषद ने करदाताओं को भी यह संदेश दिया कि वह उनकी आशंकाओं को लेकर सचेत है। इस क्रम में उसने वर्ष 2017-18 का वार्षिक जीएसटी रिटर्न भरने की अवधि को दो माह बढ़ाकर अगस्त के अंत तक कर दिया। साथ ही यह घोषणा भी की गई कि अगले वर्ष एक जनवरी से एक फॉर्म वाली नई रिटर्न फाइलिंग व्यवस्था लागू की जाएगी। कारोबार से कारोबार को होने वाले लेनदेन के लिए इलेक्ट्रॉनिक इनवॉइस की व्यवस्था को सैद्धांतिक मंजूरी दे दी गई। इसे आधिकारिक पोर्टल के माध्यम से अंजाम दिया जाएगा। यह भी एक अच्छा कदम है। हालांकि यही बात उस निर्णय के बारे में नहीं कही जा सकती है जिसके तहत कंपनियों द्वारा तथाकथित रूप से मुनाफाखोरी करने पर भारी भरकम जुर्माना लगाए जाने की बात कही गई।

बदले हुए नियमों के तहत अगर कर दरों में कटौती से होने वाले लाभ को ग्राहकों को देने के बजाय अपनी जेब में डालने वाली कंपनियां 30 दिन के भीतर उक्त राशि लौटाती नहीं हैं तो उन्हें मुनाफे में कमाई गई राशि का 10 फीसदी जुर्माने के रूप में चुकाना होगा। इसके अतिरिक्त मुनाफे में अर्जित राशि उपभोक्ता को अथवा उपभोक्ता कल्याण बोर्ड को लौटानी होगी। यह अतिरिक्त जुर्माना कारोबारी जगत को भारी पड़ेगा। खासतौर पर तब जबकि मुनाफाखोरी को स्पष्ट रूप से परिभाषित करने वाले नियमों और निर्देशों का अभाव है। कानून स्पष्ट रूप से यह नहीं बताता है कि लाभ का हस्तांतरण कारोबारी संस्था के स्तर पर होगा या उत्पाद श्रेणी के स्तर पर अथवा शेयर धारक स्तर पर। इसके चलते पहले ही कई बड़ी कंपनियों के बीच विवादों की शुरुआत हो चुकी है। जीएसटी को अपनाने वाले अन्य देशों मसलन ऑस्ट्रेलिया आदि की बात करें तो वहां यह स्पष्ट है कि कैसे समकक्ष प्राधिकार को किसी खास उत्पाद के विशुद्ध मार्जिन की जांच करनी चाहिए।

भारत में केवल प्रक्रिया के बारे में ही जानकारी दी गई है। यह विचित्र है कि जीएसटी परिषद ने जीएसटी व्यवस्था लागू होने दो वर्ष बाद भी नियम तो नहीं बनाए लेकिन कंपनियों के खिलाफ उसने कड़े प्रावधान अवश्य लागू कर दिए। राष्ट्रीय मुनाफाखोरी रोधी प्राधिकार (एनएए) की कार्यावधि में दो वर्ष का विस्तार भी सवाल उठाने लायक है। इस प्राधिकार का कार्यकाल पहले दो वर्ष का माना जा रहा था। यह अपने मूल विचार में ही सही नहीं था और क्रियान्वयन की चूकों से इसका स्तर और गिर गया। कंपनियों को यह स्वतंत्रता होनी चाहिए कि वे कर बदलाव पर अपनी प्रतिक्रिया दे सकें। खासतौर पर जीएसटी जैसे जटिल करों के मामले में, जिसकी विविधता का उनकी लागत पर असर पड़ता है। यह उनके प्रतिस्पर्धी और वाणिज्यिक हितों को प्रभावित करता है। अगर प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति कमजोर है और कर दरों का उचित पारेषण नहीं होने दिया जा रहा है तो यह प्रतिस्पर्धा आयोग का विषय है। यह मानना अनुचित है कि प्रतिस्पर्धा के कारण कम दर होने पर भी लागत कम नहीं होगी। जीएसटी का उद्देश्य यही था कि उपभोक्ता पर कम से कम प्रभाव पड़े। ऐसे में अगर एक अस्थायी प्राधिकार की आवश्यकता ही थी तो भी एनएए को तय अवधि में बंद कर दिया जाना था।

बिनय सिन्हा

संकटग्रस्त कंपनियों को स्थिर बनाना

औपचारिक दिवालिया प्रक्रिया तनावग्रस्त कंपनियों को स्थिर बनाती है और कर्जदाताओं की ऊर्जा को सही दिशा प्रदान करती है। इस बारे में विस्तार से बता रहे हैं **अजय शाह**

एक बार जब किसी कंपनी पर बहुत अधिक कर्ज हो जाए तो उधार करना रोजमर्रा का काम हो जाता है। पुराने कर्ज को चुकाने के लिए नियमित तौर पर नया कर्ज लिया जाता है। जब कर्जदारों को संदेह होने लगता है तो उधारी की इस आवक पर रोक लग जाती है और तनाव उत्पन्न होने लगता है। तब तनावग्रस्त कंपनियों को कर्ज चुकाने के लिए नकदी की आवश्यकता होती है। सभी कर्जदाता या कम से कम अधिकांश आगे बढ़कर अपना पैसा वापस मांगते हैं। औपचारिक निस्तारण प्रक्रिया के अभाव में प्रबंधन के पास यह क्षमता होती है कि वह तय करे कि किसका भुगतान किया जाना है। औपचारिक निस्तारण प्रक्रिया का एक लाभ यह है कि प्राथमिकता का क्रम कानूनन तय है। इससे स्थिरता बढ़ती है।

कई बार कंपनियां यदाकदा उधार लेती हैं। उन्हें इस बात को लेकर चिंतित होना होगा कि कर्जदार उनके बारे में केवल उस वक्त सोचते हैं जब उन्हें नया कर्ज लेना होता है। अन्य फर्म भारी भरकम कर्ज ले लेती हैं। जब उधार बहुत ज्यादा हो जाता है तो पुराना कर्ज चुकाने का सामान्य तरीका यही है कि नया कर्ज ले लिया जाए। कुल मिलाकर उधारी अब कंपनी को चलाते रहने का अहम जरिया बन जाती है। हर महीने या दो महीने में कंपनी को कर्जदारों से संपर्क कर नया कर्ज मांगना पड़ता है।

जो कंपनी लगातार उधारी लेती है वह एक तरह से तनी हुई रस्सी पर चलती है। किसी भी समय अगर कर्जदारों की ऋण के जोखिम को लेकर अवधारणा बदलती है तो यह कर्ज के प्रवाह को बाधित कर सकता है।

भारत में यह दिक्कत खासतौर पर है क्योंकि यहां बॉन्ड बाजार कमजोर है। हमारे यहां वसूली जाने वाली ब्याज दरों में तेजी नहीं आती क्योंकि वह ऋण की गुणवत्ता को प्रभावित करती है। जब ऋण की गुणवत्ता प्रभावित होती है तो उस तक पहुंच भी कमजोर पड़ती है। इसके परिणामस्वरूप हमें कुछ कंपनियां असहज हालत में मिलती हैं। इन कंपनियों में पुनर्भुगतान बाकी होता है और नए ऋण बाजार तक पहुंच नहीं बन पाती। पहले आदर्श स्थिति की बात करते हैं: कंपनी के पास नकदीकृत परिसंपत्तियां थीं। इस मामले में यह संभव है कि कंपनी को कायदे से नकदीकृत कर दिया जाए। एक एक कर फर्म अपनी परिसंपत्तियों को बेचती है और नकदी की मदद से पुनर्भुगतान करती है।

आज हमारे देश की वित्तीय स्थिति 10 या 20 साल पहले की तुलना में बेहतर है। अब समुचित समय में ऐसी परिसंपत्ति का निपटान करना और बेहतर मूल्य हासिल करना आसान है। ऐसा करके उन मामलों से निपटा जा सकता है जहां कर्जदाता एक मजबूत कंपनी से रुख फेर चुके हों। परिसंपत्ति का नकदीकरण अच्छी कीमत पर होता है और ऋण भुगतान भी समय पर होता है।

ऐसा ही होना चाहिए। मान लीजिए कंपनी के पास नकदीकृत करने के लिए परिसंपत्ति है। नकदी की तलाश में वह अच्छी परिसंपत्ति को सस्ती दर पर बेच सकती है। ऐसे नुकसान की भरपाई शेयर पूंजी से हो सकती है। दूसरी ओर मान लेते हैं कि कंपनी का परिसंपत्ति मूल्य इतना नहीं कि सारी देनदारी चुकाई जा सके।

इन हालात में परिसंपत्तियों की बिक्री कंपनी को गिरावट के चक्र में डाल देती है। हर परिसंपत्ति की बिक्री के साथ उसकी हालत बिगड़ती चली जाती है। उदाहरण के लिए मान लेते हैं कि 100 रुपये की एक बैलेंस शीट है जिसमें 20 रुपये की इक्विटी और 80 रुपये का ऋण है। हड़बड़ी में की गई बिक्री में 50 रुपये की परिसंपत्ति 30 रुपये में बिकती है। इन 30 रुपये का इस्तेमाल ऋण चुकाने में किया जाता है और 20 रुपये का नुकसान इक्विटी पूंजी को समाप्त कर देता है और कंपनी की स्थिति और खराब नजर आने लगती है।

दूसरी ओर अगर 100 रुपये की एक और बैलेंस शीट है जिसमें 50 रुपये की अच्छी और 50 रुपये की ही खराब परिसंपत्ति है। अगर 50 रुपये की अच्छी परिसंपत्ति इसी मूल्य में बिक जाती है और कर्ज चुकता हो जाता है लेकिन इसके पश्चात कंपनी के 50 रुपये की खराब संपत्ति बचती है जिसमें 10 रुपये की इक्विटी और 30 रुपये की ऋण देनदारी है। तब यह कंपनी भी अच्छी नहीं प्रतीत होती। दोनों ही मामलों में कर्ज भुगतान की जरूरत पूरी करने के लिए शीघ्र नकदीकरण से कंपनी को स्थिरता नहीं मिली। नए कर्ज तक पहुंच अवरुद्ध रही।

दिवालिया प्रक्रिया का औपचारिक संस्थानिक ढांचा यहां मददगार साबित होता है। ऋणशोधन अक्षमता एवं दिवालिया संहिता (आईबीसी) के तहत एक तारीख ऐसी आती है जहां कॉर्पोरेट इन्सॉल्वेंसी रिजॉल्युशन प्रक्रिया की शुरुआत होती है। इस अवधि में फर्म के खिलाफ सभी दावे निलंबित रहते हैं। यह कर्जदाताओं की समिति के लिए अवसर होता है कि वे कंपनी को स्थिर बना सकें। अगर कंपनी का बचाव संभव नहीं होता है तो तमाम ऋणदाताओं का बकाया चुकाया जाता है।

ऐसे नियम से ऋणदाता थोड़ा स्थिर होते हैं। वे अपनी ऊर्जा का सकारात्मक प्रयोग करते हुए ऋणदाताओं की समिति में शामिल होते हैं ताकि कंपनी का ऐसा पुनर्गठन हो सके कि उसका अधिक से अधिक मूल्य मिल सके। किसी कर्जदाता के लिए ऐसी संभावना नहीं होती कि वह प्रबंधन पर दबाव बनाए और केवल अपना पैसा निकलवा सके। आईबीसी का होना और न होना ही प्रमुख अंतर है।

वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग (एफएसएलआरसी) द्वारा तैयार डिजाइन में दो तत्त्व शामिल हैं। सामान्य वित्तीय फर्म के लिए और दूसरा व्यवस्थागत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय फर्म के लिए दिवालिया प्रक्रिया जो निस्तारण निगम के माध्यम से काम करेगी। यह वित्तीय निस्तारण एवं जमा बीमा (एफआरडीआई) में निहित है। तमाम अन्य फर्म के लिए हमें आईबीसी चाहिए। दिवालिया कानून सुधार समिति की दृष्टि भी कुछ ऐसी ही थी। हम इस बात पर जोर दे सकते हैं कि यह भेद सामान्य वित्तीय बनाम गैर वित्तीय फर्म का भेद नहीं है। बल्कि दो हिस्सों में बंटी इस मशीनरी को क्रियान्वित करना होगा।

हमारे यहां एक और बड़ी कमी है समुचित बॉन्ड बाजार का अभाव। जब ऋण का जोखिम ऊपर जाता है तो उसे महंगी उधारी से जोड़ा जाना चाहिए न कि ऋण बाजार में गिरावट से। बॉन्ड बाजार पहुंच में यह गिरावट मौजूदा माहौल के लिए सबसे बड़ी वजह है। यही वर्तमान में विभिन्न फर्म को अस्थिर कर रही। इसे हल करने के लिए बॉन्ड बाजार सुधार की आवश्यकता है।

(लेखक नई दिल्ली स्थित नैशनल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक फाइनैंस ऐंड पॉलिसी में प्रोफेसर हैं।)

'घर से काम' को माना जाए सुविधा न कि अधिकार

इंसानी पहलू

श्यामल मजूमदार

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने केंद्रीय मंत्रिपरिषद के अपने सहयोगियों को सलाह दी है कि उन्हें 'समय पर कार्यालय पहुंचना चाहिए और घर से काम करने से बचना चाहिए ताकि वे दूसरों के लिए उदाहरण कायम कर सकें।' इस सलाह से मंत्री चौंके नहीं होंगे क्योंकि मोदी को हमेशा से सख्त मुखिया माना जाता है। उन्होंने वर्ष 2014 में प्रधानमंत्री बनने के बाद अपनी पहली बैठक में ही अपने सहयोगियों को रोजाना 18 घंटे काम करने के लिए कह दिया था।

मोदी ने घर से काम करने के पक्ष में नहीं होने की कई वजह बताई हैं। वह चाहते हैं कि वरिष्ठ मंत्री नए मंत्रियों का मार्गदर्शन करें ताकि फाइलों को जल्द मंजूरी दी जा सके। कैबिनेट मंत्री और उनके कनिष्ठ सहयोगियों दोनों को मिलकर प्रस्तावों आदि को मंजूरी देनी चाहिए, लेकिन घर से काम करने की स्थिति में यह संभव नहीं होगा।

मोदी की सलाह उस दुनिया में पूरी तरह अनुपयुक्त लग सकती है, जहां कंप्यूटर से घर बैठे काम करना जीवन जीने का एक स्वीकृत तरीका है और कर्मचारी इसे काम एवं जीवन में संतुलन बनाए रखने का एक तरीका मानते हैं। यह कोई नहीं जानता कि उनके मंत्री इसे किस तरह देख रहे हैं, लेकिन प्रधानमंत्री के नजरिये के कंपनी जगत में कुछ समर्थक मिल सकते हैं। विश्व की सबसे बड़ी कंपनियों में से कम से कम दो ने नकारात्मक प्रभावों को देखते हुए घर से काम करने की व्यवस्था बंद कर दी। बहुत से प्रबंधक बड़ी तादाद में घर से काम करने की मंजूरी देने को लेकर संदेह रखते हैं। इसकी वजह कुछ कर्मचारियों का व्यवहार है, जो इसकी 'कामचोरी' के रूप में व्याख्या करते हैं।

ये कंपनियां मैसाच्युसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के प्रोफेसर थॉमस एलेन का उदाहरण देते हैं। उन्होंने दिखाया है कि अगर लोग 150 फुट से अधिक दूर होते हैं तो उनके बार-बार संवाद करने की संभावना कम हो जाती है। इससे पता चलता है कि स्काइप या अत्यंत सस्ती ब्रॉडबैंड सेवाएं एक जगह मिलने की जरूरत की भरपाई नहीं कर सकती।

शोध में यह भी सामने आया है कि घर से काम करना टीम की एकजुटता और नवोन्मेष के लिए अच्छा नहीं है। वर्ष 2013 में याहू की पूर्व मुख्य कार्याधिकारी मरिसा मेयर ने घर से काम करने पर रोक लगा दी थी। उन्होंने कहा कि काम के लिए सबसे बेहतर जगह बनने की खातिर संवाद एवं सहयोग महत्त्वपूर्ण होगा, इसलिए हमें एक साथ मिलकर काम करना होगा। इसीलिए उन्होंने कहा कि 'यह बेहद जरूरी है कि हम हमारे कार्यालयों में मौजूद रहें।'

मेयर की बात के खिलाफ कई तर्क दिए जा सकते हैं, लेकिन असल तथ्य यह है कि सहयोग, नवोन्मेष और संबंध एवं नेटवर्क के विकास के अवसरों को चिह्नित करने के लिए आमने-सामने संवाद होना आवश्यक है।

मेयर की अपने फैसले के लिए कड़ी आलोचना की गई। ऐसा लगता है कि हर कोई इस बात से खफा है कि कैसे गूगल की एक पूर्व कर्मचारी (मेयर गूगल में पहले उपाध्यक्ष थीं और वहां उन्होंने एक दशक से अधिक समय तक काम किया) कर्मचारियों के प्रतिकूल नीति अपना सकती हैं। लेकिन उस समय इस आलोचना की धार कुंद पड़ गई, जब उनकी नीति आने के कुछ दिनों बाद ही गूगल के शीर्ष कार्याधिकारियों में से एक ने एक टॉक शो में कहा कि एकांत में काम के 'जादुई क्षण' सृजित नहीं किए जा सकते। यहां तक कि गूगल भी यह सुनिश्चित करती है कि कम से कम कर्मचारी घर से काम करने का विकल्प चुनें क्योंकि बहुत से कर्मचारियों ने इतना अकेलापन महसूस किया कि उन्होंने हमेशा घर से काम करने का अपना विचार ही बदल लिया।

आईबीएम ऐसी कंपनी है, जिसने दशकों तक घर से काम करने की नीति अपनाई है। कंपनी ने वर्ष 2017 में घर से काम करने की नीति रद्द कर दी। उस समय कंपनी ने अमेरिका में अपने 2,600 लोगों के मार्केटिंग विभाग को एक ही स्थान पर लाने का फैसला किया ताकि सभी टीम कंधे से कंधा मिलाकर काम करें। इसका मतलब है कि जो कर्मचारी पहले घर से काम कर रहे थे, उन्हें भी कार्यालय आना पड़ेगा।

आईबीएम ने अपने फैसले के बचाव में कहा था कि उसका लक्ष्य कंपनी को और अधिक तेज बनाना है, जहां अधिकारियों का कर्मचारियों के साथ मौजूद रहना और कर्मचारियों का एक स्थान पर मौजूद होना जरूरी है। आईबीएम के इस कदम ने बहुत से लोगों को चौंकाया था क्योंकि आईबीएम घर बैठे काम करने की नीति को अपनाने वाली शुरुआती कंपनियों में से एक थी। वर्ष 2009 में जब घर बैठे काम करना महज एक फैशन था, तब आईबीएम के दुनियाभर के 386,000 कर्मचारियों में से 40 फीसदी घर से काम कर रहे थे।

साफ तौर पर घर से काम करने के कुछ सकारात्मक पहलू हैं क्योंकि इससे कार्यालय आने-जाने का समय बचता है और उससे जुड़ी थकान से भी बचा जा सकता है। ऐसा कोई नहीं मान रहा है कि घर से काम करना गलत विचार है और हर कोई इसे खत्म कर देगा। इसके बजाय इससे नौकरी को लेकर ज्यादा संतुष्टि मिलती है और आम तौर पर प्रतिभाशाली कर्मचारियों को कंपनी से जोड़े रखने के लिए कम पैसा चुकाना पड़ता है। लेकिन यह तभी सफल होगा कि हर संबंधित व्यक्ति इस बात से सहमत होगा कि यह अधिकार नहीं बल्कि सुविधा मिली हुई है। अगर प्रबंधन को यह लगता है कि कर्मचारी इस सुविधा का दुरुपयोग कर रहे हैं तो वह इस सुविधा को वापस लेने का अधिकार रखता है।

कानाफूसी

दोस्त या दुश्मन?

लोकसभा चुनाव तक तेलंगाना के मुख्यमंत्री और टीआरएस प्रमुख के चंद्रशेखर राव को लगता था कि भारतीय जनता पार्टी के साथ उनकी लड़ाई दोस्ताना है। परंतु लोकसभा चुनाव में भाजपा प्रत्याशी ने निजामाबाद से सांसद रहीं उनकी बेटी कविता को और करीमनगर में उनके करीबी सहयोगी बी विनोद कुमार को हरा दिया। पिछले सप्ताह हैदराबाद में पार्टी के नवनिर्वाचित सांसदों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि उनकी पार्टी न तो भाजपा की दोस्त है और न ही दुश्मन। उन्होंने कहा कि लोकसभा में भाजपा के पास बहुमत है और उसे उनके समर्थन की आवश्यकता नहीं। ऐसे में यही माना जा सकता है कि सत्ताधारी दल उनकी पार्टी की मांगों को लेकर भी ठंडा रुख ही अपनाएगा। उधर भाजपा की तेलंगाना इकाई के अध्यक्ष के लक्ष्मण ने दोनो दलों के बीच बढ़ती दूरी को और बढ़ा दिया है। पिछले दिनों राजधानी नई दिल्ली में अमित शाह से मुलाकात के बाद लक्ष्मण ने कहा कि सन 2023 में भाजपा तेलंगाना में सत्ता में अवश्य आएगी। उन्होंने कहा कि अब पार्टी का पूरा ध्यान राज्य में सत्ता हासिल करने पर है। टीआरएस से सत्ता हासिल करने का हर प्रयास किया जाएगा। केसीआर ने भी कलेश्वरम सिंचाई परियोजना के उदघाटन के लिए प्रधानमंत्री को आमंत्रित किया था लेकिन प्रधानमंत्री कार्यालय ने कहा कि उनके पास केसीआर से मुलाकात करने का वक्त नहीं है। इससे नाराज केसीआर ने नीति आयोग की बैठक तक में शिरकत नहीं की।

आपका पक्ष

महिला सशक्तीकरण पर सरकार का जोर

राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने संसद के संयुक्त सत्र को संबोधित किया और सरकार के दूसरे कार्यकाल का एजेंडा रखा। उन्होंने तीन तलाक और हलाला को खत्म करने के लिए विपक्षी दलों से सहयोग की अपील की। उन्होंने अपने भाषण में 18 बार महिलाओं का जिक्र किया। आज देश प्रगति के पथ पर है और धीरे-धीरे हर क्षेत्र में दुनिया के सामने अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा रहा है। एशिया में भी कई देश भारत से सहयोग की उम्मीद रखते हैं क्योंकि भारत में समस्याओं के समाधान खोजने की काबिलियत है। लेकिन जब महिलाओं के सशक्तीकरण की बात आती है तो इस मामले में भारत काफी पीछे है। हाल में जारी वैश्विक लैंगिक समानता सूचकांक में भारत 129 देशों में 95वें स्थान पर है तथा डेनमार्क शीर्ष पर है। यह सूचकांक गरीबी, स्वास्थ्य, शिक्षा, साक्षरता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व व कार्य स्थल पर समानता के मद्देनजर बनाया जाता है। ऐसा नहीं है कि देश में महिलाओं को बिलकुल अवसर नहीं दिया जाता है। देश में अरुणिमा सिन्हा, पीवी सिंधु, अवनि चतुर्वेदी और देश की सबसे युवा सांसद चंद्राणी मुर्मू आगे बढ़ीं हैं। लेकिन सामान्य और गरीब महिलाओं को समानता प्रदान करने तथा उनकी सुरक्षा के लिए सरकार को जरूरी कदम उठाने चाहिए। इस बार

केंद्र सरकार विभिन्न प्रयासों के जरिये महिला सशक्तीकरण पर जोर दे रही है

लोकसभा में महिला सांसदों की संख्या 78 है। इसमें 14.6 प्रतिशत का इजाफा हुआ है। संसद में आज भी महिला आरक्षण का मुद्दा ठंडे बस्ते में है। वर्ष 2011 के जनसंख्या आंकड़ों के हिसाब से महिलाओं की साक्षरता दर केवल 65.46 प्रतिशत है और स्कूल में बुनियादी सुविधाएं नहीं होने से आज भी लड़कियां पढ़ाई छोड़ देती हैं। महिलाओं को असंगठित क्षेत्रों में पुरुषों के मुकाबले कम वेतन दिया जाता है। ग्रामीण महिलाओं में कुशलता नहीं होने से वे नए अवसरों से वंचित रह जाती हैं।

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

देश में दवाओं की कीमतें हों कम

सरकार ने पिछले दिनों कहा कि गरीब तबके के मरीजों को राहत देते हुए महंगी दवाओं की कीमत को कम किया गया है। इससे 1,032 आवश्यक दवाओं की कीमत को नियंत्रण के दायरे में लाया गया है। सरकार ने कहा कि दवाओं की कीमत में 90 प्रतिशत तक की कमी की गई है। लेकिन अब भी बाजार में 80 प्रतिशत दवाएं महंगी बिक रही हैं और इन्हें आवश्यक दवाओं की सूची से बाहर रखा गया है। सरकारी आंकड़े को देखें तो पता चलता है कि बाजार में बिकने वाली 20 प्रतिशत दवाओं को ही आवश्यक सूची में रखा गया है तथा इसकी कीमत घटाई गई है। वहीं 80 प्रतिशत दवाएं आवश्यक सूची से बाहर है। आवश्यक सूची स्वास्थ्य मंत्रालय बनाता है तथा इसमें व्यापक इस्तेमाल होने वाली दवाओं को शामिल किया जाता है। देश में अधिकतक रोग अल्पकालिक होते हैं जैसे सर्दी, खांसी, बुखार आदि। ऐसी बीमारी की दवाएं अधिक बिकती हैं और शायद ऐसी दवाओं को आवश्यक सूची में डाली गई है। लेकिन गंभीर रोग के मरीज कम होते हैं तथा उनकी दवाएं कम बिकती हैं। ऐसी दवाएं अगर महंगी होंगी तो गरीब तबका कैसे इलाज करा पाएगा। सरकार को गरीबों को ध्यान में रखते हुए गंभीर रोग के दवाओं के दामों को भी नियंत्रित करना चाहिए।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।